MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

विद्यावार्ता®

Peer Reviewed International Refereed Research Journal

Issue-30, Vol-02 April to June 2019

Editor
Dr.Bapu G.Gholap

www.vidyawarta.com

27) राष्ट्रीय असंसर्गजन्य रोग नियंत्रण कार्यक्रमा अंतर्गत.....
कु. संगीता ब. रोहनकर, डॉ. सुनिल म.ठाकुरवार ||126

28) शारीरिक सक्षमता — ह्रासाची कारणे आणि उपाय
प्रा.डॉ.बाबुलाल एस. धोत्रे,प्रा. आदित्य किशोर सारवे, भिवापूर ||129

29) पर्जन्य आणि मानवी व कृषी जीवन संबंध : एक अभ्यास
प्रा.डॉ.उन्मेश शेकडे, लातूर ||132

30) शिक्षक दांपत्यांच्या समस्या
डॉ.प्रकश सुभाषराव देशमुख,श्री.प्रदिप मधुकरराव,नांदेड ||136

31) उत्तर प्रदेश में दलितों की शिक्षा के विकास का अध्ययन
डॉ०निशा अग्रवाल,कानपुर (उ०प्र०) ||140

32) शूद्र : प्राचीन भारत के आर्थिक स्तम्भकार
डॉ. दिनेश कुमार चारण, चूरू ||143

33) मध्यप्रदेश विधानसभा निर्वाचन—२०१३, मे महिला मतदाताओं की भगीदारी
दुर्गा चौहान, जिला अलिराजपुर ||146

34) राजस्थान के हाड़ौती राजवंश के रीति रिवाज : सामाजिक — आर्थिक परिप्रेक्ष्य
डॉ. दौलत सिंह नरूका,जयपुर ||148

35) हिमाचल प्रदेश की लोक परम्पराएं
नीलम कुमारी,हिमाचल प्रदेश ||157

36) प्राचीन भारत के यज्ञीय कर्मकाण्डों में पुरोहितों का महत्व
संदीप कुमार, जयपुर ||159

37) जम्मू क्षेत्र तथा हिमाचल प्रदेश में प्रचलित जन्म एवं विवाह सम्बन्धी संस्कार गीतों की तुलना
शोभा कुमारी, चण्डीगढ़ ||167

38) प्रकृति से साक्षात्कार इब्सन के देष में : डॉ. विनोद बब्बर
पूनम सत्यनारायण शर्मा, डॉ. सौ. अरुणा राजेंद्र शुक्ल, नांदेड ||172

39) प्राकृतिक आपदाओं का स्वरूप एवं प्रकार
खुशवंत सिंह,,उत्तराखंड ||175

www.vidyawarta.com/03 — http://www.printingarea.blogspot.com

32

शूद्र : प्राचीन भारत के आर्थिक स्तम्भकार

डॉ. दिनेश कुमार चारण
ऐसो. प्रोफेसर–इतिहास
राज. लोहिया महाविद्यालय, चूरू

सारांश

प्राचीन भारतीय सामाजिक संरचना स्वयं में अनूठी थी, जिसमें चार वर्ण और चार आश्रम थे। वर्णव्यवस्था तत्कालीन समाज की आवश्यकता थी। उस काल में वर्ण का आधार जन्म न होकर कर्म था। कालान्तर में यह वंशानुगत हो गया। छठीं शताब्दी ईसापूर्व में लोह क्रान्ति के बाद निर्मित नई अर्थव्यवस्था में उत्पन्न अनेक कृषक व शिल्पी समूहों से नई–नई जातियाँ बनने लगी। इन जातियों का समायोजन शूद्र वर्ण में कर लिया गया।

संकेताक्षर

वर्णव्यवस्था, आर्य–अनार्य, वैदिक, ईसापूर्व, लोहक्रान्ति, शिल्पी, अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जन जातियाँ, अन्य पिछड़ा वर्ग, द्विज।

प्रस्तावना

भारतवर्ष के प्राचीन दर्शन के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति जन्म से शूद्र होता है और अपने कर्म से वर्ण प्राप्त करता है। ऋग्वेद के अध्ययन के आधार पर डॉ. पी.वी. काणे ने एक कवि के कथन को लिखा है कि– मैं स्तुतिकर्त्ता हूँ, मेरे पिता वैद्य है और माता चक्कियों में आटा पिसती है। कवि कहता है कि हमारे परिवार के लोग विभिन्न कार्यों से धन अर्जित करते हैं।[1] इसका आशय है स्पष्ट है कि वर्ण का निर्धारण जन्म पर आधारित न होकर कर्म था।

तैत्तिरिय संहिता में आया है कि हमारे ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों में प्रकाश भरो।[2] अर्थात् उस समय तक शूद्र समाज के द्विज वर्णों के समकक्ष एवं महत्त्वपूर्ण थे। अस्पृश्यता भी नही थी।[3] ऋग्वेद के पुरुष–सूक्त से हमें विदित होता है कि वर्णों की

उत्पत्ति विराट पुरूष (स्वयं ईश्वर) से हुई थी।[7] विराट पुरूष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जांघ से वैश्य और पद से शूद्र उत्पन्न हुए।[8] यह प्रतीकात्मक है। डॉ. जयशंकर मिश्र लिखते है कि जिस प्रकार शरीर में मुँह, बाह, जांघ और पैर का महत्व होता है, उसी प्रकार समाज रूपी शरीर के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र प्रमुख अंग है। सभी अंग महत्वपूर्ण होते है और किसी एक अंग के बिना शरीर की स्थिति दयनीय हो जाती है।[9]

ब्राह्मण का प्रमुख कार्य धार्मिक कर्मकाण्ड, नैतिक उपदेश एवं अध्ययन–अध्यापन था। राज्य की रक्षा और विस्तार करने वाले क्षत्रिय कहे जाते थे, वहीं कृषि–पशुपालन–व्यापार आदि कार्यो से धन अर्जित करने वाला वैश्य कहा गया। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के सहायक के रूप मे कार्य करने वाला शूद्र कहलाता था। वर्ण जन्मागत नहीं थे।

डॉ. कलानाथ शास्त्री के मतानुसार वर्णव्यवस्था का जन्म तत्कालीन समाज की आवश्यकताओ की पूर्ति एवं सुव्यवस्था के लिए हुआ था। शिक्षण के लिए ब्राह्मण, रक्षण के लिए क्षत्रिय तथा कृषि–पशुपालन–व्यापार के लिए वैश्य वर्ण बनाया गया।[10] डॉ. राजबली पाण्डेय लिखते हैं कि शिक्षक, रक्षक और वैश्य को छोटे–मोटे कार्यो के लिए सहायक और सेवक की आवश्यकता थी। ये आवश्यकताएँ शूद्रों ने पूरी की।[11] तब कोई सामाजिक भेदभाव नहीं था।[12] परन्तु कालान्तर मे कार्यो की भिन्नता के आधार पर सामाजिक हैसियत मे अन्तर आने लगा। डॉ. रामशरण शर्मा ने पुराणो के आधार पर मत प्रकट किया है कि प्राचीन काल में जीवन निर्वाह के साधन जुट जाने पर लोगों को वर्णो में विभाजित किया गया। ब्राह्मणों का कर्म पूजा–प्रार्थना, क्षत्रियों का युद्ध, वैश्यों का उत्पादन और शूद्रों का कार्य शारीरिक श्रम निश्चित हुआ। यह विभाजन पूजा–प्रार्थना और युद्ध करने वालों के पक्ष मे था तथा उत्पादको के सजग विरोध की आशंका बराबर बनी रहती थी। अत: वर्णो के कर्त्तव्य नियत कर दिए गए, परन्तु ये एक–दूसरे का विरोध करने लगे।[13] वैदिक ऋषियों को इसका आभास था, इसलिए ही उन्हों ने वर्ण उत्पत्ति को दैवीय प्रबन्धन करार दिया।

दैवीय प्रबन्धन की घोषणा होने पर भी वर्णव्यवस्था के पीड़ित पक्ष ने इस व्यवस्था की अवमानना प्रारम्भ कर दी। इससे समाज मे संघर्ष और अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गई। फलस्वरूप लोग ब्रह्मा के पुत्र मनु के पास गए और यहीं से राज्य की उत्पत्ति हो गई।[14] मनुस्मृति के अनुसार राजा की नियुक्ति भगवान के द्वारा की गई, जिसमे राजा को आठ देवताओ इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा एवं कुबेर का अंश बताया गया।[15] अत: सभी लोगों द्वारा राजा की आज्ञा का पालन करना वांछनीय था। प्राचीन नीतिशास्त्रियों ने यह प्रावधान भी कर दिया था कि 'राजा को वर्णाश्रम का पालन करवाना चाहिए' इसी से लोक और परलोक श्रेष्ठ रहता है।[16] अत: कहा जा सकता है कि ईसा से शताब्दियों पहले महाकाव्य काल से भी पूर्व में सभी वर्णो को नियमानुसार आवंटित कार्य के लिए प्रेरित या बाध्य किया जाने लगा।

उसी समय एक नया परिवर्तन यह हुआ कि वैश्यों ने कृषि कार्य छोड़कर केवल व्यापार–वाणिज्य में ही रूचि लेना प्रारम्भ कर दिया। इससे राजाओं व राज्य को भी आर्थिक लाभ होने लगा, अत: वैश्यों पर पशुपालन व कृषि करने का दबाव समाप्त कर दिया गया। फलस्वरूप वैश्य, पशुपालन व कृषि से हटने लगे तथा शूद्र व नये समूह इन कार्यो में प्रवेश करने लगे।

ज्ञात रहे, वेदों मे आर्य–अनार्य युद्धों के उल्लेख मिलते है।[17] उस काल में पराजित जाति को दास व सेवक बनाया जाता था।[18] यहाँ प्राय: यह समझ लिया जाता है कि सभी पराजित को शूद्र वर्ण में सम्मिलित कर लिया गया था ; ऐसा नहीं था। वास्तव में, पराजित अनार्यों में से बहुतों को दास व शूद्र बनाया तो कुछ को द्विज भी बनाया गया। यह सर्वविदित है कि आर्यो ने प्रकृति–पशु–वनस्पति–देवी–शिव–जल पूजा जैसी अनेक प्रथाओं को अनार्यो से ग्रहण किया था। अत: सम्भव है कि बहुत से अनार्यो को भी प्रथम तीन वर्णो में सम्मिलित किया गया हो।

प्रो. मस्तराम सिंह लिखते है कि शूद्र–वर्ण का निर्माण भारत के काले रंग के आदिवासियों से नहीं हुआ, इसमें उच्च वर्णो के काले रंग के लोग भी थे। आर्यो के भारत में आगमन के प्रारम्भिक दिनों में यहाँ के निवासियों से उनके जैसे भी सम्बन्ध रहे हो,

समय–क्रम से दोनों परस्पर निकट आए और एक मिश्रित, समाज का निर्माण हुआ।[५] अत: स्वीकार करना होगा कि आर्यों के कुछ कबीले जो कुछ अन्तराल से प्रारम्भिक वर्षों में भारत आ गए थे, इनके स्थानीय लोगों के विवाह आदि सम्बन्ध भी स्थापित हो गए। इन सन्तानों को शूद्र वर्ण में सम्मिलित किया गया। अत: शूद्र वर्ण आर्यों व अनार्यों का सम्मिश्रण हुआ।

कालान्तर में कर्म पर आधारित वर्ण व्यवस्था का स्वरूप बदल गया और वर्ण वंशानुगत हो गए। सर्वविदित है कि छठीं शताब्दी तक भारत में लोहे की खोज हो चुकी थी। फलस्वरूप निर्मित नई अर्थव्यवस्था से परम्परागत समाजिक व्यवस्था के समक्ष कई समस्याएँ उत्पन्न हो गई। कृषि और शिल्प में लोहे के प्रयोग से समाज में अनेक नए समूह बन गए। ये बढ़ते गए। ये समूह जाति कहलाने लगे। सब जातियों ने अपने रीति–रिवाज, खान–पान, रहन–सहन, मान्यताएँ, देवता और नियम तय कर लिए। यह जातियां सामान्यतया कृषि और शिल्प से ही सम्बंधित थी। प्राचीन भारत की उन्नति में इन सभी जातियों का महत्वपूर्ण योगदान था प्राचीन भारतीय नीतिशास्त्रियों ने इन समस्त जातियों का समायोजन वर्ण व्यवस्था में करते हुए इन्हें शूद्र वर्ण में रखा। शूद्र अछूत नहीं थे, अपितु समाज का एक शक्तिशाली स्तम्भ थे। इसीलिए कौटिल्य ने भी अर्थशास्त्र में लिखा है कि गांव या नगर बसाते समय पहले शूद्रों को बसाया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

१. वर्तमान में यह धारणा है कि भारतीय संविधान की अनुसूचित जातियाँ व अनुसूचित जनजातियाँ ही प्राचीनकाल में शूद्र कहलाती थी। जबकि शूद्र वर्ण बहुत व्यापक था। वास्तव में, आधुनिक काल की अन्य पिछड़ा वर्ग की समस्त जातियाँ, कृषक जातियाँ, अनुसूचित जातियाँ एवं अनुसूचित जनजातियाँ आदि सब शूद्र वर्ण में सम्मिलित थी। अभी द्विज समझी जाने वाली जातियों की बहुत सी उपजातियाँ भी शूद्र मानी जाती थी।

२. सर्वविदित है कि प्राचीन भारत एक विकसित देश था जिसे विदेशी, सोने की चिड़िया कहते थे। प्रत्येक घर में दूध, दही और मक्खन भरपूर रहता था। प्राचीन भारत विज्ञान व तकनीक में भी श्रेष्ठ था। कृषि–पशु उत्पाद व अन्य वस्तुएँ इतनी अधिक थी कि निर्यात किया जाता था। व्यापार संतुलन देश के पक्ष में रहता था। यह सब शूद्रों की कठिन मेहनत का परिणाम था। यद्यपि दूसरे वर्णों का भी योगदान था परन्तु प्रमुख भूमिका शूद्र वर्ण की ही थी। क्योंकि कृषि–पशुपालन–शिल्प आदि सभी उत्पाद क्षेत्रों में शूद्र लोग ही कार्यरत थे।

सन्दर्भ :–

१. काणे, पी. वी. – धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग–१, पृष्ठ संख्या १११

२. वही – पृष्ठ संख्या ११२

३. गुप्त, शिवकुमार – प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ संख्या २३

४. कोठारी, गुलाब – पुरूष–सूक्त, पृष्ठ संख्या ७७

५. ऋग्वेद – १०.९०.०२

६. मिश्र, जयशंकर – प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पश्ष्ठ संख्या ५५

७. शास्त्री, कलानाथ – भारतीय संस्कृति, पृष्ठ संख्या ४८

८. पाण्डेय, राजबली – हिन्दू धर्मकोश, पृष्ठ संख्या ५७६

९. विद्यालंकार, सत्यकेतु – प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पृष्ठ संख्या १६६

१०. शर्मा, रामशरण – प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएँ, पृष्ठ संख्या ६७

११. गैरोला, वाचस्पति – कौटिलीय अर्थशास्त्रम्, १/१२

१२. मनुस्मृति: – ७/३–४

१३. शास्त्री, उदयवीर – कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्, १/३/१६–१७

१४. जायवाल, काशीप्रसाद – हिन्दू राज्य–तंत्र, पृष्ठ संख्या १०८

१५. मुखर्जी, राधाकुमुद – हिन्दू सभ्यता, पृष्ठ संख्या ८५

१६. गुप्त, शिवकुमार – प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ संख्या ६

❑❑❑